फोन नं.– 05644–225527, मो. 09414023427 फैक्स नं.–05644.229726
Email- mmtss05@gmail.com. rpagrawal225527@gmail.com

मित्र मण्डली तरुण समाज समिति, भरतपुर

MITRA MANDLI TARUN SAMAJ SAMITTI, BHARATPUR

(राजस्थान संस्था रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1958 (राज0 अधिनियम संख्या 28, 1958) के अन्तर्गत संख्या–5/भरतपुर/1990–91 से पंजीकृत संस्था)

पंजीकृत कार्यालय : दही वाली गली, भरतपुर – 321 001 (राज.)

क्रमांक : स.ना.अ./2016/ दिनांक : 24.02.2016

प्रतिष्ठा में,
श्रीमान सचिव महोदय,
संगीत नाटक अकादेमी,
नई दिल्ली ।

ध्यानाकर्षण– **श्री अमित जी सक्सैना**

विषय :– रामलीला प्रॉडक्शन एवं प्रशिक्षण की विस्तृत रिपोर्ट मय फोटोग्राफ्स भेजने बावत।
"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)"
(SCHEME FOR "SAFEGUARDING THE INTANGIBLE CULTURAL HERITAGE AND DIVERSE CULTURAL TADITIONS OF INDIA" (Ramlila)"

प्रसंग :– आपकी स्वीकृति संख्या F-No. 28-6/ICH-Scheme/55/2014-15 @ 12812 dated 13.03.2015

मान्यवर महोदय,

उपरोक्त विषयान्तर्गत आपका ई–मेल से संदेश प्राप्त हुआ बहुत–बहुत धन्यवाद।

आपके संदेश के निर्देशानुसार एवं संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली से प्राप्त मौखिक सलाहानुसार पुनः विस्तृत प्रतिलेखन कराया गया तथा प्रशिक्षण शिविर आयोजन हुआ। जिसकी रिपोर्ट एवं अखबारों की फोटोप्रति आपके अवलोकनार्थ संलग्न है। इसके अतिरिक्त मंचन सम्बंधी कुछ फोटोग्राफ्स भी संलग्न है। रिपोर्ट निर्देशित ईमेल आईडी **ich@sangeetnatak.gov.in** को सॉफ्ट कापी में भिजवायी जा रही है। हार्ड कॉपी स्पीड–पोस्ट से भिजवाई जा रही है।

अगले चरण की रिपोर्ट आपकी स्वीकृति के पश्चात मय उपयोगिता प्रमाण–पत्र व आय–व्यय विवरण के साथ भिजवायी जायेगी।

अतः आपसे अनुरोध है कि शीघ्र ही परियोजना का अगला चरण पूरा करने के लिये स्वीकृति मय स्वीकृत अनुदान राशि के भिजवाने की कृपा करें।

आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि पूर्व की भाँति आपका मार्गदर्शन व सहयोग हमें प्राप्त होगा।

अग्रिम धन्यवाद सहित।

संलग्न– उपरोक्तानुसार।

भवदीय

(राजेन्द्र प्रसाद अग्रवाल)
महामन्त्री / निदेशक

रामलीला प्रॉडक्शन एवं प्रशिक्षण 2016

रिपोर्ट

– प्रायोजक –

संगीत नाटक अकादेमी

नई दिल्ली–100 001

आयोजक

मित्र मण्डली तरुण समाज समिति

दही वाली गली,

भरतपुर-321 001 (राजस्थान)

रामलीला प्रॉडक्शन एवं प्रशिक्षण

2016

"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)"

(SCHEME FOR "SAFEGUARDING THE INTANGIBLE CULTURAL HERITAGE AND DIVERSE CULTURAL TADITIONS OF INDIA" (Ramlila)"

रिपोर्ट

– प्रायोजक –

संगीत नाटक अकादेमी

नई दिल्ली–100 001

आयोजक

मित्र मण्डली तरुण समाज समिति

दही वाली गली,

भरतपुर-321 001 (राजस्थान)

मित्र मण्डली तरुण समाज समिति, भरतपुर

MITRA MANDLI TARUN SAMAJ SAMITTI, BHARATPUR

(राजस्थान संस्था रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1958 (राज0 अधिनियम संख्या 28, 1958) के अन्तर्गत संख्या-5/भरतपुर/1990-91 से पंजीकृत संस्था)

पंजीकृत कार्यालय : दही वाली गली, भरतपुर – 321 001 (राज.)

संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली

की आर्थिक सहभागिता से आयोजित

SCHEME FOR "SAFEGUARDING THE INTANGIBLE CULTURAL HERITAGE AND DIVERSE CULTURAL TADITIONS OF INDIA"

भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण

के अन्तर्गत

रामलीला प्रॉडक्शन एवं प्रशिक्षण–2016

पुर्न विस्तृत कार्य की

रिपोर्ट

मित्र मण्डली तरुण समाज समिति, भरतपुर द्वारा भारत सरकार, संस्कृति मंत्रालय, संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली की "भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)" SCHEME FOR "SAFEGUARDING THE INTANGIBLE CULTURAL HERITAGE AND DIVERSE CULTURAL TADITIONS OF INDIA" (Ramlila)" के अन्तर्गत प्रमुख लोक विधा रामलीला का प्रॉडक्शन कर मंचन एवं प्रशिक्षण का प्रतिलेखन किया गया। जिसकी रिपोर्ट निम्न प्रकार है :–

प्रशिक्षण के दौरान प्राप्त विचारों के आधारों पर निम्न निबन्ध प्रतिलेखन के रूप में प्रस्तुत है :–

प्रस्तावना

लोक अथवा पारम्परिक रंगमंच

लोकनाट्य की संज्ञा उस नाट्यरूप को दी जाती है, जो जन–समुदाय के आनन्द–उल्लास की सामूहिक अभिव्यक्ति होता है तथा समाज में प्रचलित रूढ़ियों, धार्मिक अनुष्ठानों और लोक–कथाओं से जुड़ा होता है, इसके साथ ही उसमें एक तरह की अनायासता और अनगढ़पन होता है, जिसके कारण उसे नियमित नाटकों की धारा से पूरी तरह अलग और शायद कुछ हीन भी माना जाता है, परन्तु भारतीय नाट्यरूपों के लिए यह परिभाषा उपयुक्त नहीं है। उनमें एक ओर, महाकाव्यों, पुराणों अथवा गाथा–काव्यों से जुड़े होने के कारण साहित्यिकता का गुण, दूसरी ओर, प्रदर्शन और संरचना में नियमों और अनुशासनों का लगभग उसी प्रकार पालन किया जाता है जैसे नागर रंगमंच में। इसी से भारत की अधिकांश लोकनाटकीय विधाओं को पारम्परिक नाट्य अथवा रंगमंच कहना अधिक उपयुक्त है।

भारतीय नाट्य की हजारों वष पुरानी परंपरा की प्रारम्भिक कड़ियाँ स्पष्ट नहीं है। सामान्यतः यही माना जाता रहा है कि लौकिक संस्कृत के नाटा भारतीय नाट्य के प्रारम्भिक रूप हैं, परन्तु संस्कृत के साँचे में ढले, निश्चित नियमानुशासित नाटकों को 'आदि' कहना संगत नहीं लगता। संस्कृत नाटकों के प्रदर्शन की पद्धति का निश्चय भी नहीं किया जा सका है। इतना ही कहा जा सकता है कि नाटकीय प्रस्तीतकरण के सम्बंध में जो भी सूक्ष्म–से–सूक्ष्म संकेत मिल सके हैं, उनमें लोकतत्व स्पष्ट है। अतः यह मान लेना शायद उचित हो कि संस्कृत की सुविकसित नाट्य–परम्परा के पहले भी कोई नाट्य–परम्परा के पहले भी कोई नाट्य–परम्परा रही होगी, जो एक ओर तो संस्कारित (अथवा संस्कृत) होकर महान् नाटकों के रूप में प्रतिफलित हुई और दूसरी ओर, अनेकों शैलियों और क्षेत्रों में पारम्परिक नाट्यधारा के रूप में प्रवहमान हुई। इसीलिए भारतीय नाट्य के विकास की कहानी में पारम्परिक और नागर दोनों ही परम्पराओं को समान स्थान है।

वैदिक संवाद–सूक्तों और कर्मकाण्डों में लोकनाटकीय तत्व

वैदिक साहित्य में स्वतंत्र विधा के रूप में नाटक का अस्तित्व नहीं मिला। ऋग्वेद में लगभग एक दर्जन संवादसूक्त है जिनको आख्यान और नाटकीय कार्य व्यापार की कुछ झलक मिलने के कारण विद्वानों ने नाटक का पूर्वरूप माना है। इन संवाद सूक्तों में प्रमुखतः पुरूरवा–उर्वशी संवाद, यम–यमी संवाद, विश्वामित्र–नदी, नेमा–भार्गव और इन्द्र, सरमा–पाणिस और अगस्त्य–लोपामुद्रा–संवाद है। इस संवादों में (दोनों या तीनों) पात्रों के प्रश्न–उत्तर बड़े स्पष्ट और नाटकीय है। विश्वामित्र–नदी संवाद ऐतिहासिक संकेतों की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसमें नदी का मानवीकरण करते हुए बड़ी काव्यात्मकता का समावेश किया गया है। यम–यमी संवाद यमी के आवेशपूर्ण कथनों और यम के अनौखे संयम के कारण उन दो चरित्रों के बीच नाटकीय घात–प्रतिघात की सृष्टि करता है। पुरूरवा और उर्वशी का संवाद अत्यन्त नाटकीय स्थिति में प्रारम्भ होता है, पर्याप्त समय तक साथ रहने के पश्चात उर्वशी पुरूरवा के पास से सदा के लिए जा रही है, पुरूरवा उसके तवरह से आशंकित होकर जो संवाद कहता है, उनमें बड़ी मार्मिकता और करूणा है। पुरूरवा और उर्वशी का यही प्रमाख्यान लगभग 100 वर्ष बाद संस्कृत के सर्वश्रेष्ठ नाटककार कालिदास के विक्रमोर्वशीयम् नाटक की कथावस्तु बना।

ऋग्वेद के कथात्मक संवाद आगे के महाकाव्यों और नाटकों–दोनों के ही प्रारम्भिक स्रोत बतलाये गये हैं। संवादसूकतों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है। कि वैदिक कार्यों के बीच एक प्रकार का नाटयरूप प्रचलित था, जिसमें प्रचलित लोक कथाओं का प्रयोग किया जाता था, सम्भवतः इन पद्यमय संवादसूक्तों के साथ गद्य में कुछ आख्यान वाक्य भी रहे होंगे जो कालान्तर में विस्मृत हो गये हैं। इनमें दृश्य–वर्णन और पात्रों का स्पष्ट विधान तो है ही, यदि साथ में नाटकीय कार्य–व्यापार की कल्पना कर ली जाये तो इनका स्वरूप अधिक स्पष्ट हो जाता हे। यह उल्लेख भी मिलता है कि इन संवादसूक्तों के पाठ में यज्ञकर्त्ताओं के दो दल भाग लेते थे। अतः संवादसूक्त धार्मिक अनुष्ठान से सम्बंधित नाटयप्रदर्शना के अंश भी हो सकते हैं और शाय यह कहना ठीक होगा कि संवादसूक्तों से नाटक की उत्पत्ति नहीं हुई, बल्कि वैदिक संवादों के लिखे जाने के समय जाटक का अस्तिव था और इन संवादसूक्तों को अनुष्ठानपरक नाटकों के संवादों के रूप में ही लिखा गया था।

ब्राह्मणों और उपनिषदों में नाटय–तत्व अधिक स्पष्ट हो जाते हैं और संवादों का बहुत अधिक प्रयोग हुआ है। सोमयज्ञ के अवसर पर होने वाला एक लघु परिसंवाद कात्यायन श्रौतसूत्र (7–8–25) में प्राप्त होता है। कठोपनिषद् में नचिकेता और यम के बीच जीवन के श्रेयस और प्रेयस की चर्चा में, नाटकीय दृश्य का–सा विधान है। उपनिषदों में सिद्धान्त–वाक्य नहीं प्रस्तुत किये गये वरन् परिचर्चा के रूप में विचार सामने रखे गये हैं।

वेदों में निश्चित संकेत मिलते हैं कि उस समय तक संगीत और नृत्य का पर्याप्त विकास हो चुका था। ऋग्वेद के उषस सूक्त में, जो अपनी उच्च स्तर की काव्यात्मकता के लिए बहुचर्चित रहा है, उषा की तुलना सुन्दर वेशभूषा में अलंकृता और विविध मुद्राओं में अंग–प्रदर्शन करने वाली एक नर्तकी से की गयी है। सामवेद से स्पष्ट ज्ञात होता है कि उस समय संगीत का स्तर बहुत ऊँचा था। यजुर्वेद में (30–6) सूत ओर शैलूष जाति का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि 'नृत के लिए सूत और गीत के लिए शैलूष को नियुक्त करना चाहिए।'

वैदिक कर्मकाण्ड में कई अनुष्ठानपरक नृत्यों का उल्लेख मिलता है। विवाह के अवसर पर मांगलिक नृत्य के रूप में सुहागिन स्त्रियों के नृत्य करने की प्रथा थी। इन गीतों और नृत्यों के साथ मुद्रा और भावप्रदर्शन भी किया जाता था। महाव्रत का अनुष्ठान धरती की उर्वरता को बढाने के उददेश्य से किया जाता था। उसमें स्त्रियाँ अग्नि के चारों ओर नाचती हुई वर्षा का स्वागत करती थीं। उसके अनिवार्य अंश के रूप में एक गौरवर्ण वैश्य और कृष्णवण शूद्र का एक श्वेत चर्म के लिए संघर्ष और अन्त में वैश्य के विजयी होने का अभिनय प्रस्तुत किया जाता था। विवरण से पता चलता है कि यह नाटकीय अनुष्ठान समूचे वैदिक–युग में प्रचलित था, इसके साथ एक हास्य–प्रसंग भी होता था, जिसमें अपनी–अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए एक गणिका और ब्राह्मण वटु परस्पर झगडा और गाली–गलौज करते थे। महाव्रत के अनुष्ठान में जिस प्रकार नाटकीय प्रसंग में गीत, नृत्य के संयोग और गम्भीर प्रसंग के बीच हास्य प्रसंग के समावेश का उल्लेख है, वह हमारे पारम्परिक नाटय रूपों की विशेषता है। अतः संभव है, वैदिक कर्मकाण्डों के बीच इस प्रकार के अभिनय–परक अनुष्ठानों की प्रेरणा उस

समय की लोकनाट्य परम्परा से मिली हो। ऋग्वेद के नवें मण्डल में वर्णित सोमयज्ञ में सोम–विक्रय के हास्य प्रसंग और ऋग्वेद (34) में हारे हुए जुआरी के एकालाप और (119) मदोन्मत्त इन्द्र के प्रलाप को प्रहसन और भाण के प्राचीन उदाहरणों के रूप में देखकर यह माना जा सकता है कि ये दोनों नाट्यप्रकार उस समय लोकभाषा में रहे होंगे और कर्मकाण्ड को अधिक जनप्रिय और प्रभाव बनाने की दृष्टि से इनको अपनाया गया होगा।

कात्यायन के श्रोतसूत्र में कहा गया है कि पितृमेघयज्ञ के अवसर पर नृत्य, गीत और वाद्य का प्रयोग अवश्य होना चाहिए। यह उल्लेख बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि आज भी मणिपुर और असम में मृतक के श्राद्ध के अवसर पर बडे समारोह के साथ नृत्य और नाटकीय प्रदर्शन होते है। इनमें पूरा समुदाय इस विश्वास से भाग लेता है कि इनके द्वारा मृतकों की आत्मा को शान्ति मिलती है। सुदूर बालिद्वीप के हिन्दुओं में भी पितृमेघ के अवसर पर बहुत बडे पैमाने पर नृत्य–नाटय प्रदर्शन होते हैं। इनमें पर्याप्त समय और धन का व्यय होता है और यह इतना आवश्यक माना जाता है कि इनके लिए पर्याप्त साधनों के अभाव में श्राद्ध–कर्म को ही स्थगित कर दिया जाता है और महीनों बाद गायन, वादन और नृत्य के बड़े भारी आयोजन के साथ सम्पन्न किया जाता है। अनुष्ठान सम्बंधी नाट्य प्रदशनों में इनका बडा महत्वपूर्ण स्थान है। इन उदाहरणों में ऐसा प्रतीत होता है कि यह परम्परा पहले पूरे देश में और बाहर भी प्रचलित रही होगी, कालान्तर में किसी कारण प्रधान भू–भाग में समाप्त हो गयी और जो प्रदेश थोड़ हटकर या देश के बाहर थे, वहाँ बनी रही।

अन्य देशों, जैसे यूनान और मेक्सिको आदि की प्राचीन नाट्य–परम्परा के अध्ययन से भी पता चलता है कि वहां संगीत, नृत्य तथा नाटकीय प्रदर्शन धार्मिक अनुष्ठानों के अनिवार्य तत्व थे। अतः भारत में नाटयकला के उदगम में धार्मिक अनुष्ठानों का योगदान कोई आवर्श्य की बात नहीं है।

छाया और पुतली प्रदर्शन

कुछ विद्वानों ने छाया और पुतली प्रदर्शनों को नाटय के विकास की प्रारम्भिक कडी माना है। संस्कृत नाटकों में सूत्रधार की अवस्थिति का आधार पुतली प्रदर्शन कहे गये हैं। यदि यह मत निर्विवाद हो सके तो नाटक लोकविधान से

जुडता है, क्योंकि ये प्रदर्शन लोक–परम्परा के अंग है। संस्कृत में एक ही नाटक 'दूतांगद' को छाया नाटक स्वीकार किया गया है, 'गीत गोविन्द', 'गोपाल केलि चन्द्रिका' अथवा 'महानाटक' के प्रस्तुतीकरण की क्या पद्धति थी, इसका निश्चय नहीं हो सका है जबकि पारम्पिक रंगमंच पर अनेकों पुतली और छाया–पुतली नाटय–प्रदर्शनों की शताब्दियों पुरानी परम्परा मिलती है।

यही स्थिति मुखौटों के प्रयोग के सम्बंध में भी है। कई पारम्परिक नाट्य–रूपों में मुखौटों का प्रयोग होता है। मान्यता यह है कि मानवीय नाट्य की प्रारम्भिक अवस्था में ही भाव–प्रदर्शन के लिए मुखौटों का प्रयोग किया जाने लगा होगा, परन्तु संस्कृत नाट्य–परम्परा में उनके प्रयोग सम्बंधी कोई उल्लेख नहीं मिलते।

तथ्यों के अभाव में नाटक के विकासक्रम का निश्चय करना असम्भव ही है, कदाचित यही कहना उचित होगा कि नागर और पारम्परिक पद्धतियाँ समानान्तर ही विकसित होती रहीं और उनके बीच निरन्तर आदान–प्रदान होता रहा।

महाकाव्यों और अन्य प्राचीन ग्रन्थों में नाटकीय प्रदर्शन सम्बंधी उल्लेख इस विकास की अगली कड़ी के रूप में देखे जा सकते हैं।

रामायण और महाभारत

दोनों में नाटकीय प्रदर्शनों का उल्लेख मिलता है। रामायण में राम के राज्याभिषेक की तैयारी में जो अनेक उत्सव वर्णित हैं, उनमें नटों और नर्तकों के प्रदर्शना का भी उल्लेख है।[1] (वा.रा : अयो. का., षष्ठ सर्ग, श्लोक–14) अयोध्या नगरी के वर्णन में कहा गया है कि नगरी में सभी व्यवसायों के लोग थे और 'वधूनाटकसंघ' भी बने हुए थे। वधूसंघ, अर्थात नृत्य–प्रदर्शन के स्थल और नाटक संघ नाट्य–प्रदर्शन के स्थान।[2] (वा.रा. : बाल का., पंचम सर्ग, श्लोक–12) महाभारत में दो नाटकों का उल्लेख मिलता है। हरिवंश जो महाभारत का ही उपसंहार अंश है, ऐसे अभिनेताओं की चर्चा करता है, जिन्होंने रामायण पर आधारित नाट्य प्रदर्शन किया। (देखिये, रामलीला का सदभव)। एक दूसरे नाटक– कौबेर रम्भाभिसार[3] (महाभारत : हरिवंश वं, अध्याय–91–97) का भी उल्लेख है।

महाकाव्यों और गाथाओं की गायन परम्परा

शूरवीरों की कीर्तिगाथाओं, पुराण–आख्यान और देवाख्यानों की लम्बी मौखिक परम्परा प्रायः सभी देशों में पायी जाती है। इस लम्बी और मौखिक परम्परा का प्रमाण भारतीय लोक मानस के सांस्कृतिक संरचनाकारों और उसकी कथाप्रियता में मिलता है। मौखिक काव्य के पाठ और गायन की अनेक शैलियों से नृत्य तथा नाटय रूपों का सम्बंध देखा जा सकता है। प्राचीन भारतीय साहित्य में सूत और बन्दीजनों द्वारा शौर्यकाव्य और महाकाव्य के पाठ के स्फुट उल्लेख मिलते हैं। पूर्व उत्सव के रूप में प्रतिदिन देवता और वीरों के आख्यानों का पाठ होता था। प्रति दस दिन के अन्तर से ये कथाएँ कहीं जाती थीं। दो वीणावादक स्वरचित्त गाथाओं में राजा की उदारता और वीरता का यशोगान करते थे। पुरूषमेघ यज्ञ की आचार क्रियाओं में आख्यानों का पाठ सम्मिलित था। शतपथ ब्राह्मण में अश्वमेघ का वर्णन करते हुए यज्ञ, दान और युद्ध विजय की गाथाएँ गाने का उल्लेख है। बाल्मीकि रामायण के प्रारम्भ में ही यह बतलाया गया है कि राम की कथा का गान उनके दरबार में कुश और लव उनके यमज पुत्रों ने किया था, उनके गायन की शैली बडी मनोहर थी और उससे दरबार में बैठे हुए ऋषि अत्यन्त प्रसन्न हुए थे। कथावाचन की इस शैली को कुशीलव परम्परा से जोडा जा सकता है, कुशीलव शब्द की व्युत्पति रामायण के कुश–लव से मानी जा सकती है। ये पर्यटक कुशीलव इन महाकाव्यों की कथाओं को गा–गाकर जनसाधारण तक पहुंचाते थे। महाकाव्यों का स्वरूप विन्यास इस प्रकार के गान के उपयुक्त था। महाभारत में 'युधिष्ठिर उवाच', 'सूत उवाच' आदि उपशीर्षक दिये हुए हैं। सूतों और कुशीलवों के लिए इन संवाद–अंशों को आपस में बांटकर पढना सरल और स्वाभाविक रहा होगा। महाकाव्य का कुशीलवों द्वारा गायन नाटकीय कला की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है। ये कुशीलव राजप्रसादों तक सीमित नहीं रहे वरन जनता के बीच गये और इन कथाओं के प्रचार में योग दिया। रामायण और महाभारत के ये व्यावसायिक कथावाचक स्थान–स्थान पर कथापारायण का आयोजन रचते थे। ग्रामीण जनता के धार्मिक और सांस्कृतिक ज्ञान के यही शिक्षक

होते थे। इन्हीं कथागायकों ने– जिन्हें कथक[1] (कथकों का आज भी राम–कथा गायन के क्षेत्र में बहुत महत्व है। इस सम्बंध में देखें परिशिष्ठ–2– अयोध्या के विविध रामोत्सव) और धारक भी कहते हैं– देश के कौने–कौने तक महाकाव्यों का संदेश फैलाया और नाटक के अग्रदूत बने। सांची के एक भित्ति–उत्कीर्णन में, जो निश्चित रूप से ई0 पू0 काल का है, हमें इन कथकों का निरूपण मिलता है। इस उत्कीर्णन में कथकों को कथागायन के साथ नृत्य और अभिनय करते हुए प्रदर्शित किया गया है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि कथा के ओजपूर्ण पाठ और गायन के साथ संवाद अंशों का अभिनय भी होता था। अतः यही कुशीलव अथवा कथक महाकाव्यों के पाठ और नाट्यप्रदर्शन के बीच की कड़ी है। नाट्यशास्त्र में चार प्रकार की वृत्तियों का पर्णन किया है। क्रमशः इनका विकास इस प्रकार हुआ– महाकाव्यों का पाठ, भारती वृत्ति, सूतों और कुशीलवों में अंशों को बांट कर कथा गायन : सात्वती वृत्ति, नृत्यमुद्राओं के साथ गायन : कैशिकी वृत्ति और सम्पूर्ण नाट्य प्रदर्शन : आरभटी वृत्ति।

प्राचीन काल में प्रचलित इस कथागायन परम्परा का मध्ययुग में बहुत विकास हुआ। दसवीं शताब्दी तक नाट्यकलाकारों का एक निश्चित वर्ग चारण उत्पन्न हो चुके थे। ये चारण प्राचीन सूतों और कुशीलवों की परम्परा में माने जा सकते हैं। राजनीतिक दृष्टि से भारत उस समय छोटे–छोटे राज्यों में बंटा हुआ था। उसके राजा लोग सदा छोटी–छोटी लड़ाइयों में लगे रहते थे। प्रत्येक दरबार में चारण अवश्य रखे जाते थे। ये युद्धों में राजा के अनुचर के रूप में जाते थे और युद्ध विजयी वीरों की यशगाथा तथा भीषण रक्तपात की कहानियों का वर्णन करते थे। पहले तो चारण राजदरबारों तक ही सीमित रहे, परन्तु क्रमशः इन्होंने कथा–गायन को अपना व्यवसाय बनाया और धार्मिक उत्सवों या मेलों, अथवा नगरों के चौराहों या गांवों के खुले मैदानों में गा–गाकर पौराणिक अथवा लोकप्रिय वीरों की कहानियाँ सुनाने लगे। कभी कभी पौराणिक कथा संस्कृत में लिखी होती थी। संस्कृत की पंक्तियों को गाकर फिर जनभाषा में उसका विश्लेषण भी यिका जाता था। इसको अधिक रोचक और स्पष्ट बनाने के

लिए कभी–कभी प्रमुख कथागायक अपने साथ दो या तीन अन्य गायकों को भी ले लेता था और सबके बीच संवाद के रूप में कथा चलती थी। कभी वह एक नटी को साथ लेता था जो कथा के पाठ किये अंशों का गाकर और नृत्य मुद्राओं द्वारा अधिक स्पट और आकर्षक बनाती थी। इन्हीं चारणों के कारण रामायण–महाभारत की गाथाएँ सामान्य जनता के बीच प्रचलित और लोकप्रिय बन गयी। चारणों और महाकाव्यों की लोकप्रियता के संयोग से नाटय के विकास को सुदृढ़ भूमि प्राप्त हो गयी।[1] (The Indian Theatre : Adya Rangacharya, P. 56)

कथा–गायन को यह शैली आज भी समूचे देश में अलग–अलग भाषा क्षेत्रों में अलग–अलग नामों से प्रचलित है। तमिलनाडु का हरिकथाकलाक्षेपम्, आन्धप्रदेश की बुर्राकथा, महाराष्ट्र और राजस्थान के पवाड़े, हिन्दी–प्रदेश में आल्हा, गोपीचन्द और पूरन भगत आदि के गाथागीत, छत्तीसगढ़ की रामायण और महाभारत की लोक गायन परम्परा[2] *(छत्तीसगढ़ प्रदेश में यह गायन परम्परा छत्तीसगढ़ी बोली में प्रचलित है। इसमें एक प्रमुख आख्याता होता है, उसके चारों ओर चार वादक और गायक बैठते हैं। वह गद्य में कथा अंश कहता है और वाद्य संगीत के साथ उसी अंश पर आधारित गीत गाता है। गायन और गद्य सीाषण दोनों में बडी नाटकीयता होती है। प्रधान आख्याता के हाथ में एकतारा होता है। वही कथा सुनाते समय कभी धनुष बन जाता है और कभी गदा। आख्याता कभी घुटनों के बल बैठकर अश्वरोही की मुद्रा बनाता है, कभी रथ हाँकने वाले सारथी की ओर कभी तलवार उठाये योद्धा की। छत्तीसगढ़ के महाभारत आध्यान तो प्रख्यात कथानक के अनुसार है परन्तु रामायण के कथानक मूल कथा से बहुत भिन्न है।), पंजाब का हीर–रांझा– ये सभी अत्यन्त लोकप्रिय हैं।*

इनकी गायन शैली में पूरी नारटकीय योजना रहती है। कविता की कड़ियाँ एक व्यक्ति गाता है और टेक में सारी मण्डली शामिल हो जाती है। टेक पर पहुंचकर वाद्य, नृत्य और अभिनय– सबका मिश्रण हो जाता है, वाद्य सम पर पहुंचकर सब रूक जाते हैं और फिर एक स्वर कविता की अगली कड़ियों का आलाप करता है, यही क्रम चलता रहता है। इनमें से धार्मिक

कथाओं के पाठ धार्मिक दृष्टि से मंदिरों में या हँसती–रोती है और चढ़ावा आरती करती है।

इसके अतिरिक्त लगभग सभी पारंपरिक नाट्य रूपों में नाटकीय प्रदर्शन के साथ कथागायन भी किया जाता है। यक्षगान का भागवत, अंकियानाट का सूत्रधार, और रामलीला और रासलीला के रामायणी और समाजी– सभी प्रणाली की देन है। अतः यह कहना उपयुक्त ही होगा कि नाटकीय प्रदर्शन के साथ कथागायकों की जो परम्परा हमें ग्रन्थिकों के रूप में पतंजलि के महाभाष्य में नाटकीय प्रदर्शन के विवरण में मिलती है, वह बराबर अलग से तो चलती ही रही, पारंपरिक नाट्यरूपों का भी एक अनिवार्य अंग बन गयी।

झाँकियाँ और शोभायात्राएँ

अनेक सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक पर्वों पर शोभा–यात्राओं की लोक–परम्परा तथा राज्यारोहण, युद्धप्रयाण, विजय, यज्ञ आदि के अवसरों पर जुलूसों की राजकीय परम्परा प्राचीन युग में भी प्रचलित रही है। बाल्मीकि रामायण में कहा गया है कि हनुमान से राम की विजय और उनके पुनरागमन का समाचार पाकर भरत ने राम के लिए एक भव्य जुलूस सजाया था।[3] (वॉ0 शंभूनाथसिंह : हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विकास, पृ–268) उस जुलूस में नगर के सम्भ्रान्त जनब्राह्मण, योद्धा और वचपारी, सूत और बन्दीजन, वादक और नर्त्तकियाँ तथा राजपरिवार के सदस्य और परिजन सभी थे। राजमार्ग सजाया गया था, उस पर पुष्प और लावा बिखेरे हुए थे, राजमार्ग सजाया गया था, उस पर पुष्प और लावा बिखेरे हुए थे, राजमार्ग के दोनों ओर के मकानों पर फूलों और दीपों का श्रृंगार किया गया था। लोक सोने के हौदे से युकत हाथियों और रथों पर बैठकर चल रहे थे, दुन्दुभियों तथा शंखों के स्वर से दसों दिशाएँ काँप रही थीं, हाथों में पुष्पमालाऐं और मोदक थे और सबके आगे थे शीश पर राम की पादुकाएँ रखे हुए श्वेत पुष्पमालाओं और स्वर्णदण्डयुक्त चमर लिये हुए भरत। बाल्मीकि रामायण का यह वर्णन हमें रामलीलाल के भर मिलाप जुलूस की याद दिलाता है जो प्रत्येक वर्ष नगर नगर में बडी ही घूमधाम से निकाला जाता

है और अधिकतर स्थानों की रामलीला का एक प्रमुख आकर्षण होता है। इसी प्रकार महाभारत में युधिष्ठिर द्वारा अश्वमेघ–यज्ञ के अवसर पर विशाला जुलूस का वर्णन किया गया है।

बौद्धों और जैनों के धार्मिक ग्रन्थों में भी जुलूसों का उल्लेख मिलता है। ललित विस्तर में बुद्ध के जन्मोत्सव के अवसर पर जुलूस का विस्तृत विर्णन किया गया है। फाह्यान, युवानच्वाँग आदि विदेशी यात्रियों ने जुलूसों, शोभा यात्राओं और उत्सव समसरोहों का विस्तृत वर्णन किया है। बुद्ध के अभिनन्दन में होने वाला रथ–समारोह, मंदिरों में बौद्ध त्रिरत्न का प्रतिष्ठापन और उन सारे समारोहों में होने वाला संगीत और नृत्य वास्तव में वेद और महाकाव्य कालीन समारोहों में होने वाला संगीत और नृत्य वास्तव में वेद और महाकाव्य कालीन समारोहों की परिणति है। हर्ष के दान देने के अवसर पर विशाला शोभायात्राओं का आयोजन होता था, जिनमें छोटे–छोटे दृश्य और झांकियां प्रस्तुत होते थे। मार्ग को तोरण–द्वारों और वन्दनवारों से सजाया जाता था, स्थान स्थान पर स्थिर मुद्रा में पात्र ऊँचे मंचों पर अनुरूप वेशभूषा धारण कर खड़े होते थे और संगीत तथा कथागायन भी चलता रहता था। कन्नौज के एक समारोह में स्वयं हर्ष मने इन्द्र और उनके मित्र भास्कर वर्मन ने ब्रह्या का रूप धारण किया था।[1] (विनयकुमार सरकार : द फोक एलिमेन्ट इन हिन्दू कल्चर, पृ.त्र–13) महायान शाखा में हिन्दू पूजा समारोहों का बहुत प्रभाव दिखलायी देता है। उनमें बुद्ध की प्रतिमा का बाजे–गाजे के साथ जुलूस निकाला जाता था। पहले–पहल इस प्रकार के एक जुलूस का उल्लेख बुद्ध की प्रतिमा बनने पर पेशावर में पहली शताब्दी ईसवी में मिलता है।

प्राचीन समय से चली आती हुई जुलूसों की यह परम्परा मध्ययुग का प्रधान उत्सव बन गयी, बल्कि यह कहना अधिक ठीक होगा कि मध ययुगीन जीवन का समूचा परिदृश्य सामूहिक समारोहों, धार्मिक और राजकीय जुलूसों की भव्य और विशाल झांकी है। वैष्णव मंदिरों में भी पूजा का भारी संभार किया जाता था। उस पूजा के उपकरण और पद्धतियों से स्पष्ट था कि इटदेव के विग्रह की दिनचर्या सम्राटों की भांति थी और इष्टदेव की

प्रतिमा के जुलूस भी बड़ी धूमधाम से निकाले जाते थे। इस प्रकार की शोभायात्राओं के अनेक अवसर आते ही रहते थे। श्रीकृष्ण की डोल जाता या जगन्नाथ जी की रथयात्रा अथवा विभिन्न पर्वों पर देवताओं की चौकियों से युक्त धार्मिक जुलूस अथवा विजय या राज्याभिषेक के समय राजनीतिक जुलूस निकला ही करते थे। आज भी समूचे भारत में इस प्रकार के जुलूसों का प्रचलन है। जैन धार्मिक पर्वों पर रथ–यात्राएँ, महाराष्ट्र में गणपति पूजा के जुलूस, बंगाल में दूर्गापूजा तथा उड़ीसा में रथयात्रा, मैसूर, कुल्लू अथवा बस्तर का दशहरा समारोह (इनमें रामकथा के अभिनय की परम्परा नहीं है, झांकियों सहित जुलूस मात्र निकाले जाते हैं) पूरी सजधज के साथ निकाले जाते हैं। इन जुलूसों के प्रभाव स्वरूप पारम्परिक रंगमंच का वातावरण भी उत्सवपूर्ण चहल–पहल से युक्त हो गया। क्रमशः इन जुलूसों में चौकियों पर मूकनाटकीय दृश्य दिखाये जाने लगे। इन नाटकीय दृश्यों के विषय अधिकतर पौराणिक कथाओं से लिये जाते थे। विकास के अगले क्रम में इनमें संवाद जुड़ गये होंगे और जुलूस के मंच रंगमंच में परिणत हो गये होंगे। पारंपरिक रंगमचं की कई शैलियों, जैसे रामलीला और रासलीला के अभिनय में झांकी दृष्यों की इस नाटकीय रूढ़ियाँ पारसी रंगमंच में बनी रहीं और रामकथा से सम्बंधित आधुनिक नाट्य प्रयोगों में भी सफलतापूर्वक प्रयुक्त हो रही है।

अवधारणा एवं संरचना

रामलीला भारतीय पारम्परिक नाट्य का एक महत्वपूर्ण अंग है। लोकप्रिय और व्यापकता की दृष्टि से उसका हमारे जन–जीवन में विशिष्ट स्थान हैं शायद यह कहना उपयुक्त होगा कि रामलीला ही एक ऐसा नाट्य–रूप है जो एक समूचे समुदाय की धार्मिक, सांस्कृतिक और कलात्मक अभिव्यक्ति है। वास्तव में कितनी ही शताब्दियों से नियमित रूप से प्रस्तुत होने वाला यह नाट्यरूप अब मात्र नाटकीय प्रदर्शन नहीं है, वरन् हमारा प्रमुख धार्मिक एवं सांस्कृतिक पर्व बन गया है। समूचे उत्तर भारत में तो शायद ही ऐसा कोई व्यक्ति होगा जो इससे परिचित न हो।

आज जो रामलीला उत्तर भारत के जन–जीवन का अनिवार्य अंग बन चुकी है, उसके उद्भव की कहानी अस्पष्ट है। प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में नाटकों का विषय रही है, परन्तु रामलीला और राम–नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियो में अन्तर है। एक तो रामलीला धार्मिक नाट्यरूप है, उसका उद्देश्य रामभक्ति का प्रचार और प्रसार है। दूसरे, रामलीला के प्रस्तुतिकरण की शैली नाटक की भाँति मात्र संवादाओ पर आधारित नहीं है, वरन् महाकाव्य–आधारित है, उसमें रामचरितमानस का निश्चित आधार रहता है।

भारतीय नाट्य–परम्परा में रामकथा के प्रस्तुतिकरण की इस शैली के संकेत हमें बहुत प्राचीन समय से मिलने लगते है।

पारम्परिक राम–नाट्य मे क्षेत्र और शैलियों की दृष्टि से रामलीला सबसे अधिक व्यापक है, और प्रतिवर्ष उसके प्रस्तुतिकरण निश्चित समय पर होते हैं, परन्तु सभी नाट्य–रूपों में रामकथा का प्रस्तुतीकरण होता है। धार्मिक नाट्य रूपों में तो राम–नाटय का प्रमुख स्थान है ही, सामाजिक नाट्य रूपों में भी लौकिक प्रसंगों के साथ–साथ राम कथा के प्रसंग भी अभिनीत होते है। इस प्रकार पारम्परिक राम–नाट्य असम से लेकर केरल तक समूचे देश में अनेक रूपों और शैलियों में प्रस्तुत होता है।

हर क्षेत्र के राम नाट्य में क्षेत्र विशेष की भाषा रामायणों का प्रयोग कथागायन और संवादों के लिए किया जाता है। इसी से राम नाट्य में एक ओर तो रामभक्ति की प्रेरणा से रचित रामायणों द्वारा प्रस्तुत राम का अवतारी रूप प्रतिष्ठित हुआ है, दूसरे उनमें काव्य गुण और सम्पन्नता आ गयी है। कथानक की उदात्त भावभूमि, पात्रों का आदर्शवादी चित्रण और प्रदर्शन का संचमित वातावरण इस आदर्श प्रधान कथा की ओर भारतीय जन की गहरी श्रृद्धा को व्यक्त करता है। इसी से कथातत्व, संवाद, संगीत और नृत्य के प्रयोग की दृष्टि से विविधता होने पर भी हर प्रदेश के राम नाय में उद्देश्य और वातावरण एक समान लगता है।

भरतपुर की रामलीला–एक अद्भुत शैली

यह रामलीला अपेक्षाकृत नवीन है। सन् 1900 के लगभग से में जब भरतपुर रियासती राज्य था तो महाराजा किशनसिंह के राजस्व काल में पं0 मायाशंकर जी, सुंदरलाल जी एवं गोपीलाल जी वैद्य ने इस लीला का सूत्रपात 'सनातन धर्म सभा' के अंतर्गत किया। सभा के सदस्य मथुरा, रामनगर आदि में रामलीला देखने गये और वहां से लौटकर, उन्हीं से प्रेरणा ग्रहण कर इस लीला का निर्माण किया। ग्यारह वर्ष तक लीला चली, फिर अनिवार्य कारणों से इसे बंद कर देना पडा, सन् 1950 में इसे पुनः चलाया गया, परन्तु पाँच वर्ष तक ही चल सकी।

सन् 1960 से श्री वेंक्टेश्वर मंदिर (पुराना लक्ष्मण मंदिर) के महन्त गंगादास जी इस रामलीला को अपनी देखरेख में कराने लगे। महंत जी रामलीला के बडे अनुरागी थे और उन्हें इसके धार्मिक और कलात्मक दोनों ही पक्षों का बराबर ध्यान रहता था। उनके संरक्षण में आने के बाद से रामलीला प्रतिवर्ष बडी निष्ठा से प्रस्तुत की जाती रही।

कथा प्रसंग

भरतपुर की रामलीला आश्विन शरद पक्ष एकादशी से प्रारम्भ होकर दशहरा के दूसरे दिन एकादशी तक चलती है। इसका प्रदर्शन क्रम इस प्रकार है– श्री गणपति पूजन, पृथ्वी का देवताओं के पास जाना, आकाशवाणी, रामजन्म एवं नामकरण, विश्वामित्र प्रसंग, ताड़का वध, पुष्पवाटिका, धनुष यज्ञ तथा लक्ष्मण–परशुराम संवाद, राज्याभिषेक की तैयारी, कोप–भाजन और वन गमन, राम–निषाद मिलन और चित्रकूट–गमन, भरत आगमन, राम–भरत संवाद तथा पादुका लेकर लौटना, पंचवटी प्रसंग, सीताहरण और राम–लक्ष्मण का पम्पा सरोवर जाना, बालि वध, सुग्रीव राज्याभिषेक, हनुमान आदि का सीता–संधान के लिए प्रस्थान, अशोक वाटिका प्रसंग, लंका दहन, राम का लंका प्रस्थान, सुबेलगिरी की झांकी, अंगद रावण संवाद, लक्ष्मण शक्ति, हनुमान का द्रोणगिरी पर्वत लाना तथा लक्ष्मण का मूर्छा से सचेत होना, कुम्भकरण, मेघनाद एवं रावण वध, विभीषण राजतिलक, राम का अयोध्या आगमन, भरत मिलाप, एवं राम राज्याभिषेक। इसके बाद अन्तिम दिन लीला नहीं होती, मानस का अखण्ड पाठ

तथा हरिकीर्तन मंदिर में कराया जाता है। भरतपुर लीला में क्षेपक प्रसंग नही लिये जाते।

प्रस्तुतिकरण की शैली

भरतपुर की रामलीला पूर्णतया रामचरितमानस पर आधारित है। इसकी शैली अपने ढंग की अनूठी है, इसमें रामचरितमानस की चौपाईयों को ही संवादों के रूप में चौपाई की प्रचलित लयों में गाया जाता है। यह शैली रामचरितमानस की नाटकीय परियोजना को पूर्णतया स्पष्ट करती हुई मेरी इस धारणा को दृढ करती है कि मानस में रामलीला में प्रयोग की दृष्टि से नाटकीय संवाद खण्डों की सफल अवतारणा की गयी है। भरतपुर मे वर्णनात्मक खण्डों का व्यास पाठ करते हैं और पात्र चौपाईयाँ बोलते हैं, पाठ और संवाद के गायन में ढोलक, मजीरे आदि किसी भी वाद्य का प्रयोग नही किया जाता, व्यास लगभग एक ही लय में पाठ करते है, परन्तु पात्र हर्ष, क्रोध, वीरता आदि भावों के अनुसार चौपाई की धुनों में अंतर कर लेते है लेकिन कोई भी धुन चौपाई के पाठ की प्रचलित धुनों के अतिरिक्त नहीं होती, इस रामलीला में नृत्य का बिल्कुल प्रयोग नहीं होता। अभिनव की शैली कुछ अतिरंजनापूर्ण है। अंगद–रावण संवाद में अंगद और रावण दोनों हीं अपनी चौपाईयों को बोलते समय हाथ ऊँचे करके और हिलाकर तथा पैर पटक–पटककर संवाद बोलते थे। अभिनय में स्वाभाविकता का कम, जनता को प्रभावित कर सकने का अधिक ध्यान रखा जाता है। वर्णनात्मक प्रसंगों का गायन व्यास हीं करते हैं, चाहे चौपाई में एक शब्द भी संवाद के अतिरिक्त हो तो उसे व्यास हीं पढ़ेंगे जैसे–

कह दसकंठ कवन तै बंदर। मैं रघुवीर दूत दशकंधर।।

इस अर्धाली में 'कह दसकंठ' व्यास करते हैं, 'कवन तै बंदल', रावण बोलता है और 'मैं रघुवीर दूत दशकंधर' अंगद कहते है। चौपाईयों में संवाद बोलने की यह प्रणाली बड़ी कर्णप्रिय लगती है।

यद्यपि इस रामलीला में संवाद लीलाओं की प्रधानता है फिर भी कुछ जुलूस और झांकियाँ भी इसका अनिवार्य अंग है। राम विवाह और भरत मिलाप के जुलूस निकलते है। राम विवाह का जुलूस बडा भव्य होता है, नगर की

परिक्रमा करता है। राम राज्याभिषेक की पंचायत झांकी बडी सुंदर लगती है। अंगद रावण संवाद के दिन सुबेलगिरी की झॉकी भी बडी आकर्षक होती है। रावण दरबार के बिल्कुल सामने अभिनय स्थल के दूसरी ओर लता पत्रों से ढॅका सुबेलगिरी बना था– बीच बीच में बिजली के रंगीन कुमकुमों की सजावट बहुत ही सुरूचिपूर्ण थी। मानस के वर्णन के अनुसार राम लेटे हैं। अंगद पैर बना रहे हैं, सिर सुंगीव की गोद में है, विभीषण और हनुमान इधर उधर करबद्ध खडे हैं, कुछ दूरी पर शरसंधान किये लक्ष्मण, सारा दृश्य बडा प्रभावशाली थी।

संवाद और भाषा

पहले कह चुके हैं कि इसमें मानस के चौपाई दोहों को ही संवाद के रूप में बोला जाता है। संवाद बोल देने के पश्चात व्यास उन संवादों का अर्थ ब्रजभाषा गद्य में बताते है। इसका कारण यह है कि भरतुपर की जन–भाषा ब्रज है और अवधी की चौपाईयों को यहां बिना अर्थ बताये समझा नहीं जा सकता। विभीषण राम की शरण में आये हैं और राम उनसे कहते हैं–

खल मंडली बसहु दिन राती। सखा धरम निरबहई कोहि भाँति।

पंडित अर्थ बताते हैं– अरे मित्र, तुम दुष्टन की मंडली में निवास करौ हो, अपने धरम का निबाह करते होओगे? इस प्रकार अवधी और ब्रज इन दोनों बोलियों/भाषाओं का प्रयोग इस रामलीला में होता रहता है।

वेशभूषा और श्रृंगार

इस रामलला की वेशभूषा और श्रंगार– सामग्री मथुरा से आती है, मखमली अथवा नाइलान, कमख्वाब के चोगें, पगडियाँ, चूडीदार पाजामा, झिलमिलाती नाइलोन साडियाँ, कच्चे मोतियों और नगों के चमकते आभूषण, ऊँचे–ऊँचे जरी के मुकट, धनुष–बाण, गदा और तलवारें–वेशभूषा के यही उपकरण रहते आये हैं। राम–लक्ष्मण की वनवास की वेशभूषा सन्यासियों जैसी थी। रावण काला चोगा पहने था, बानर अंगरखियाँ और जांघिया पहनते है। चमकियों, गेरू और रामरज का श्रृंगार, सीता का श्रृंगार आधुनिक ढंग का होता है। इस रामलीला में मुखौटों का प्रयोग बिल्कुल नहीं होता–रावण भी मुखौटा नहीं पहना। संकेतात्मक मुखौटे अब लगाये जाने लगे हैं।

अभिनेता

भरतपुर में स्वरूपों के लिए ब्राह्मण होना आवश्यक नहीं है, यह कुछ आश्चर्य की बात है क्योंकि ब्राह्मण लडकों को स्वरूप बनाने का कारण यही है कि सभी लोग बिना किसी हिचक के उनको प्रणाम कर सके, बालकों को सदाचारी अवश्य होना चाहिये, अल्प आयु के स्वरूपों का विधान नहीं है। 17–18 तक की आयु के लडके स्वरूप बनते हैं, पात्रों का चुनाव बडी सावधानी से किया जाता है, महीने भर पहले से उन्हें अभिनय शिक्षण दिया जाता है। इस शैली मे व्यास संवाद चौपाईयाँ नहीं पढते, अभिनेताओं के लिए अपनी चौपाईयाँ याद रखना जरूरी है, इसी से काफी अभ्यास की आवश्यकता होती है।

अभिनय स्थल

लीला करने वाले बताते हैं कि भरतुपर लीला के अभिनय स्थल हर दिन बदलते थे और दृश्य अनुरूप स्थल पर लीला आयोजित होती थी। परन्तु अब वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए स्थान की उपलब्धता के आधार पर उपलब्ध मैदान में एक ओर लंका और दूसरी ओर अयोध्या बना देते हैं। लंका का मंच बहुत ऊँचा होता है और विस्तार में 16 वर्ग फुट। अंगद–रावण–संवाद के लिए अंगद को बहुत ऊँचे और पतले से मंच पर चढकर संवाद बोलना होता है। पुष्पवाटिका प्रसंग में अभिनय स्थल के बीच में पुष्पयुक्त गमले रखे जाते है और अशोक वाटिका में फलों से युक्त वृक्षों की डालियाँ मंच सज्जा के लिए सिंहासन, कुर्सियां आदि होते है। दर्शक अभिनय स्थल के दोनों ओर बैठते हैं। बीच–बीच में राम की जय–जयकार के नारे रामलीला के प्रति दर्शकों की निष्ठा को सूचित करते है।

धार्मिक अनुष्ठान

रामलीला का प्रारम्भ श्री गणेश पूजन से होता है। मुकुट पूजा नहीं होती है। सज्जा करने के बाद स्वरूप (पात्र) अपने इष्ट के मंदिर में जाकर दर्शन करते हैं, तब स्वरूपों की आरती होती है और 'श्री रामचन्द्र कृपालु भजमन' से लीला प्रारम्भ की जाती है। राजतिलक के पश्चात ब्राह्मण भोज और स्वरूपों की विदाई होती है, अन्तिम दिन लीला नहीं होती केवल अखंड रामायण पाठ होता है। अतः स्पष्ट है कि मंदिर से अधिक निकट का संबंध होने के कारण भरतपुर–रामलीला में धार्मिक अनुष्ठानों के प्रति अधिक आग्रह है।

रामलीला कलाकारों को प्रशिक्षण के दौरान प्राप्त विचारों का संग्रह

पाँच दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का आयोजन–2016

मित्र मण्डली तरूण समाज समिति, भरतपुर द्वारा 15 फरवरी 2016 से 19 फरवरी 2016 तक संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली की सहभागिता से "भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)" SCHEME FOR "SAFEGUARDING THE INTANGIBLE CULTURAL HERITAGE AND DIVERSE CULTURAL TADITIONS OF INDIA" (Ramlila)" के अन्तर्गत रामलीला प्रॉडक्शन मंचन के लिये 5 दिवसीय कलाकारों का प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया। जिसमें 24 रामलीला कलाकारों ने एवं 4 संदर्भ विशेषज्ञों ने भाग लिया, जिनको अकादमी के नियमानुसार मानदेय, यात्रा भत्ता आदि दिया गया। प्रशिक्षण सम्बंधी समाचार पत्रों की कतरन पुँज व मंचन सम्बंधी कुछ फोटोग्राफ्स इस रिपोर्ट के साथ संलग्न है। प्रशिक्षण शिविर के दौरान प्राप्त विचार एवं समापन के अवसर पर संदर्भ विशेषज्ञों के विचार इस प्रकार हैं:–

प्रेमचन्द उपाध्याय (अलीगढ़) ने कहा कि आज जो रामलीला उत्तर भारत के जन–जीवन का अनिवार्य अंग बन चुकी है, उसके सदभव की कहानी अस्पष्ट है। प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में नाटकों का विषय रही है, परन्तु रामलीला और राम–नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियों में अन्तर है। एक तो रामलीला धार्मिक नाट्यरूप है, उसका उद्देश्य रामभक्ति का प्रचार और प्रसार है। दूसरे, रामलीला के प्रस्तुतिकरण की शैली नाटक की भांति मात्र संवेदाओं पर आधारित नहीं है, वरन् महाकाव्य–आध ारित है, उसमें रामचरितमानस का निश्चित आधार रहता है।

अन्य प्रशिक्षक के रूप में बोलते हुए खैमचन्द (मथुरा) का मानना रहा कि चौदहवीं शताब्दी तक संस्कृत नाटकों का रूप परिवर्तित होने लगा था। नाटकों में गद्य का प्रयोग कम से कम होने लगा था और उनकी संरचना अधिक से अधिक चम्पू काव्य के रूप में रह गयी थी। लगता है कि उस समय तक संस्कृत नाटकों को भी संगीत और नृत्य के साथ प्रस्तुत करने की दृष्टि से लिखा जाने लगा था। उस समय की नाट्ययाभिनय की पद्धति का एक विवरण हमें दामोदर गुप्त रचित

कुटअनीमत काव्यम में मिलता है। रत्नावली नाटिका के प्रस्तुतिकरण में प्रारम्भ से अन्त तक संगीत और नृत्य की प्रधानता ज्ञात होती है। इसमें मदनोत्सव के वर्णन में चर्चरी का भी उल्लेख किया गया है। नाटक की समाप्ति पर जो बातें कही गयी हैं उनसे भी नाट्य–प्रदर्शन में संगीत की प्रधानता स्पष्ट होती है "गंभीर मधुर शब्दों तथा अनेक भंगिमाओं वाले लम्बे गीत की अभ्रष्ट लय के साथ संगत द्वारा वाटक ने अपना कमला दिखाया है गायकों ने नियमित आरोह, अवरोह, द्रुत, मध्य और विलम्बित ताल, लय तथा सुन्दर, समताल और रस से युक्त सुन्दर ढंग से गाया।"

अन्य प्रशिक्षक का मानना रहा कि रामलीला मुक्त आकाशी होती है। इसमें सूत्राधार व्यास आसनी होता है जो समय–समय पर आवश्यक निर्देश देता रहता है। इसके लिए एक ही मंच एवं आगृह पर्याप्त नहीं होता वरन् भिन्न–भिन्न स्थानों पर अनुकूल वातावरण से लाभ उठाया जाता है। इन मण्डलियों से सामान्तया चौदह से पन्द्रह व्यक्ति रहते हैं। एक–दो व्यक्ति हारमोनियम बाजे पर रामचरित मानस की चौपाइयाँ कहने के लिऐ होते हैं। इन्हें व्यास गद्दी पर बैठ कर हारमोनियम बजाना होता है। गायक रामायण पाठ करता है। साथ में नक्कारा, ढोलक, तबला भी बजाया जाता है। अभिनेता इन चौपाइयों के आधार पर गद्य में बोलकर वार्तालाप करते हैं।

अन्य प्रशिक्षक का मानना रहा कि रामलीला उत्तर प्रदेश का अत्यंत लोकप्रिय लोकमंच है। इसका मूल स्थान अयोध्या और काशी है किन्तु ब्रज जनपद में भी इसका प्रचलन है और इसकी मण्डलियाँ ग्राम–ग्राम में पायी जाती है। महाकवि तुलसीदास तथा मेघा भगत ने रामलीला का श्रीगणेश किया था। रामलीला का उद्देश्य लोगों में भगवान श्रीराम जी के आदर्श को प्रस्तुत करना है। राम लीला में मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम जी के जीवन की विभिन्न झांकियाँ प्रस्तुत की जाती हैं। रामचरित मानस में कई ऐसे स्थल हैं जो अत्यन्त नाटकीय हैं। उन्हीं को आधार मानकर रामलीला का अभिनय किया जाता है। रामलीला का रंगमंच अपने ढंग का यथार्थवादी रंग–मंच भी माना जाता है। इसमें लीला शब्द रासलीला की देन है। ऐसा कहा जाता है कि रासलीला की देखा देखी रामलीला का प्रचार हुआ होगा। काशी में तुलसीदास जी ने इसको व्यवस्थित किया। दशहरे के आस–पास रामलीला का आयोजन किया जाता है। एक क्षेत्र विशेष या ग्राम विशेष के

कलाकारों द्वारा भी इसका प्रदर्शन किया जाता है। यह प्रदर्शन चौदह से पन्द्रह दिन तक चलता है।

अन्य प्रशिक्षक का मानना रहा कि एक दिन की लीला को पैकरन कहा जाता है। पैकरन शब्द संस्कृत के प्रकरण शब्द का तद्भव रूप है जो दो पात्रों के संवाद होते हैं जैसे अंगद–रावण या लक्ष्मण–परशुराम संवाद आदि। तब भी एक–एक पात्र के कथनों को भी पैकरन कहा जाता है। 'अपने–अपने पैकरन पै सावधान रहियो भैया', कलाकरों द्वारा बीच–बीच में ऐसा कहा जाता है। रामलीला में लक्ष्मण––परशुराम संवाद, कैकयी–दशरथ संवाद, सीता–रावण संवाद तथा अंगद–रावण संवाद प्रमुख है। इन संवादों की योजना पर बहुत अधिक बल दिया जाता है। जिस दिन ऐसे संवाद होते हैं दर्शकों की संख्या दुगुनी हो जाती है। इन संवादों का मूल आधार केवल रामचरितमानस ही नहीं होता वरन् कवितावली से कवित्त, सवैये, केशवकृत, रामचन्द्रिका से कुछ छन्द, राम काव्य परम्परा के ग्रंथों से अवतरित, आर्य संगीत रामायण से कुछ गीत सम्मिलित रहते हैं। इस प्रकार के संवाद इतने लंबे हो जाते हैं कि कभी–कभी तो एक या डेढ़ घण्टें तक चलते रहते हैं। मण्डलियों में जो सबसे अधिक अनुभवी तथा प्रतिभावान कलाकार होता है, वहीं ऐसे संवादों वाले दिन भूमिका में उतरते हैं। लोकनाटक में कुछ दृश्य ऐसे अवश्य होते हैं जिन्हें मंच पर दिखाना अभीष्ट नहीं होता। उनका काम केवल सूचना मात्रा से लिया जा सकता है। पंचवटी तथा भिन्न स्थिन पर सरयू पार करते समय किसी तालाब के किनारे राम–केवट संवाद तथा राम–रावण युद्ध तथा रावण दहन एक भिन्न विस्तृत मैदान में किया जाता है। वनवास तक के दृश्य मन्दिरों में ही अभिनीत कर लिए जाते हैं। ये खुले रंगमंच बनाते हैं जिन पर एक ओर राम–लक्ष्मण और दूसरी ओर कुम्भकरण, रावण यदि राक्षस वर्ग के व्यक्ति बैठे दिखाई देते हैं जिनकी वेशभूषा का सौंदर्य देखते ही बनता है। यहां रंग सज्जा पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। रामायण के कथानक में अनेक अस्वाभाविकता होने पर भी लोग बड़ी श्रद्धा से रामलीला देखते हैं। इसमें धार्मिक तुष्टि तो होती ही है, मनोरंजन का भी इसमें एक विशिष्ट स्थान है। सभी स्थानों में यह क्षेत्रीय

भाषा में होते हैं, अतः वहां का अशिक्षित व्यक्ति भी आसानी से समझ लेता है। रामलीला समस्त जनता के लिए बोधगम्य है इसके लिए भाषा में किसी प्रकार की बनावट या सजावट की आवश्यकता नहीं होती। दैनिक क्रिया कलाप में जिस भाषा का प्रयोग होता है उसी का प्रयोग अभिनय करते समय भी किया जाता है जिसके कारण लोगों में साधारणीकरण शीघ्रता से हो जाता है।

रामलीला की प्रसिद्ध मण्डली तो मथुरा–वृंदावन में ही हैं परन्तु छोटी–छोटी मण्डलियां बहुत से स्थानों पर हैं। आध्यात्मिक रूप में भी अनेक शहरों, कस्बों और बड़े–बड़े ग्रामों में ऐसी मण्डलियां वर्ष भर में एक बार रामलीला करती है। पूरे भारत वर्ष में खेला जाने वाला यह धार्मिक मंच है।

मित्र मण्डली तरूण समाज समिति, भरतपुर (राजस्थान) द्वारा प्रशिक्षण के पश्चात् श्री रामलीला समिति भरतपुर द्वारा आयोजित 14 दिवसीय रामलीला में प्रदत्त उपलब्धता को देखते हुए अपनी सहभागिता **प्रतिलेखन** (Documentation) के रूप में निवाही। ओडियो एवं वीडियो रिकोर्डिंग के अतिरिक्त प्रिंट कलर फोटोग्राफ से प्रतिलेखन कराया जो कि आने वाले समय में एक दस्तावेज के रूप में भावी पीढी के सामने होगा।

पुनः एक बार इस आयोजन के प्रति भारत सरकार, संस्कृति मंत्रालय, संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली का बहुत–बहुत आभार। उपरोक्त विवेचन का मतलब यह है कि हमारी भावी पीढ़ी अपनी सांस्कृतिक विरासत की तह में पहुँचे ताकि "भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)" **(SCHEME FOR "SAFEGUARDING THE INTANGIBLE CULTURAL HERITAGE AND DIVERSE CULTURAL TADITIONS OF INDIA" (Ramlila)"** का अस्तित्व व वर्चस्व कायम रह सके।

साथ ही यह विश्वास है कि इस सांस्कृतिक लोकविधा को बढावा देने के लिये इस संस्था को आगे भी इसी प्रकार अकादेमी का सहयोग प्राप्त होता रहेगा।

(राजेन्द्र प्रसाद अग्रवाल)
महामन्त्री/निदेशक

परिशिष्ट–ए

रामलीला प्रॉडक्शन एवं प्रशिक्षण

2016

"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)"

(SCHEME FOR "SAFEGUARDING THE INTANGIBLE CULTURAL HERITAGE AND DIVERSE CULTURAL TADITIONS OF INDIA" (Ramlila)"

प्रॉडक्शन के फोटोग्राफस

– प्रायोजक –

संगीत नाटक अकादेमी

नई दिल्ली–100 001

आयोजक

मित्र मण्डली तरुण समाज समिति

दही वाली गली,

भरतपुर-321 001 (राजस्थान)

संगीत नाटक आकदेमी, नई दिल्ली की सहभागिता से

"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)" प्रॉडक्शन मंचन के कुछ फोटोग्राफ्स

रामलीला मंचन कलाकारों को प्रशिक्षण देते हुये संदर्भ विशेषज्ञ

रामलीला कलाकारों को प्रशिक्षण देते हुये संदर्भ विशेषज्ञ

संगीत नाटक आकदेमी, नई दिल्ली की सहभागिता से

"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)" प्रॉडक्शन मंचन के कुछ फोटोग्राफ्स

धनुषयज्ञ लीला से पूर्व राजा जनक एवं मुनि के रूप में कलाकार

धनुष यज्ञ लीला से पूर्व राजा जनक एवं विभिन्न राज्यों से आये राजा गण कलाकार के रूप में

संगीत नाटक आकदेमी, नई दिल्ली की सहभागिता से

"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)" प्रॉडक्शन मंचन के कुछ फोटोग्राफ्स

धनुष यज्ञ लीला में लक्ष्मण–परशुराम संवाद करते हुये कलाकार

श्रीराम जी एवं श्री हनुमानजी का वन में मिलन की लीला का दृश्य

संगीत नाटक आकदेमी, नई दिल्ली की सहभागिता से

"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)" फ्रॉंडक्शन मंचन के कुछ फोटोग्राफ्स

श्रीराम द्वारा बाली वध लीला का दृश्य

रामलीला मंचन का आनन्द लेते हुये दर्शकगण

संगीत नाटक आकदेमी, नई दिल्ली की सहभागिता से

"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)" प्रॉडक्शन मंचन के कुछ फोटोग्राफ्स

बाली–सुग्रीव युद्ध लीला में सुग्रीव का साहस बढ़ाते हुये श्रीराम

प्राकृतिक रूप में बने पर्वत पंचवटी पर विराजमान कलाकार विभिन्न रूपों में

संगीत नाटक आकदेमी, नई दिल्ली की सहभागिता से

"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)" प्रॉडक्शन मंचन के कुछ फोटोग्राफ्स

वन संस्कृति के प्रतीक चित्रकूट पर्वत पर विराजमान कलाकार विभिन्न रूपों में

रावण–विभीषण के दरबार का एक दृश्य

संगीत नाटक आकदेमी, नई दिल्ली की सहभागिता से

"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)" प्रॉडक्शन मंचन के कुछ फोटोग्राफ्स

रावण–अंगद संवाद का दृश्य

परिशिष्ट–बी

रामलीला प्रॉडक्शन एवं प्रशिक्षण

2016

"भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण (रामलीला)"

(SCHEME FOR "SAFEGUARDING THE INTANGIBLE CULTURAL HERITAGE AND DIVERSE CULTURAL TADITIONS OF INDIA" (Ramlila)"

समाचार पत्र
कतरन–पुँज

– प्रायोजक –

संगीत नाटक अकादेमी

नई दिल्ली–100 001

आयोजक

मित्र मण्डली तरुण समाज समिति

दही वाली गली,

भरतपुर-321 001 (राजस्थान)

दैनिक अरूण प्रभा, भरतपुर/अलवर

दिनांक 20 फरवरी, 2016

पृष्ठ संख्या 1 कॉलम संख्या 5-6

(61)

पांच दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन

भरतपुर। मित्र मण्डली तरूण समाज समिति एवं संस्कृति मंत्रालय, संगीत नाटक अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में संचालित ''भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण'' के अंतर्गत रामलीला प्रतिलेखन एवं प्रशिक्षण के तहत 5 दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन शुक्रवार को तिलक नगर में सम्पन्न हुआ। प्रशिक्षण समापन को सम्बोधित करते हुए प्रेमचंद उपाध्याय ने कहा कि आज जो रामलीला उत्तर भारत के जन-जीवन का अनिवार्य अंग बर चुकी है, उसके सद्भाव की कहानी अस्पष्ट है। प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में नाटकों का विषय रही है, परन्तु रामलीला और राम-नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियों में अन्तर है। एक तो रामलीला धार्मिक नाट्यरूप है, उसका उद्देश्य रामभक्ति का प्रचारऔर प्रसार है। अन्य प्रशिक्षक के रूप में बोलते हुए खैमचंद यदुवंशी (मथुरा) का मानना रहा कि चौदहवीं शताब्दी तक संस्कृत नाटकों का रूप परिवर्तित होने लगा था। नाटकों में गद्य का प्रयोग कम-से-कम होने लगा था और उनकी संरचना अधिक से अधिक चम्पूकाव्य के रूप में रह गयी थी। लगता है कि उस समय तक संस्कृत नाटकों को भी संगीत और नृत्य के साथ प्रस्तुत करने की दृकष्टि से लिखा जाने लगा था। उस समय की नाट्ययाभिनय की पद्धति का एक विवरण हमें दामोदर गुप्त रचित कुट्टनीमत काव्यम् में मिलता है। शिविर में 24 कलाकारों ने भाग लिया। उनको वेशभूषा, संवाद आदि के संबंध में जानकारी दी गई। उपरोक्त विवेचन का मतलब यह बताया गया कि वह अपनी सांस्कृतिक विरासत की तह में पहूँचें। आभार संस्था के निदेशक आर.पी.अग्रवाल नें व्यक्त किया।

दैनिक प्रातःकाल, जयपुर

दिनांक 20 फरवरी, 2016

पृष्ठ संख्या 8 कॉलम संख्या 1-2

पांच दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन

भरतपुर। मित्र मण्डली तरूण समाज समिति एवं संस्कृति मंत्रालय, संगीत नाटक अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में संचालित ''भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण'' के अंतर्गत रामलीला प्रतिलेखन एवं प्रशिक्षण के तहत 5 दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन शुक्रवार को तिलक नगर में सम्पन्न हुआ। प्रशिक्षण समापन को सम्बोधित करते हुए प्रेमचंद उपाध्याय ने कहा कि आज जो रामलीला उत्तर भारत के जन-जीवन का अनिवार्य अंग बर चुकी है, उसके सद्भाव की कहानी अस्पष्ट है। प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में नाटकों का विषय रही है, परन्तु रामलीला और राम-नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियों में अन्तर है। एक तो रामलीला धार्मिक नाट्यरूप है, उसका उद्देश्य रामभक्ति का प्रचारऔर प्रसार है।

(02)

दैनिक पक्षी का संदेश, भरतपुर/जयपुर

दिनांक 20 फरवरी, 2016

पृष्ठ संख्या 1 कॉलम संख्या 1-2

पांच दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन

भरतपुर 19 फरवरी। मित्र मण्डली तरूण समाज समिति एवं संस्कृति मंत्रालय, संगीत नाटक अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में संचालित ''भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण'' के अंतर्गत रामलीला प्रतिलेखन एवं प्रशिक्षण के तहत 5 दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन शुक्रवार को तिलक नगर में सम्पन्न हुआ। प्रशिक्षण समापन को सम्बोधित करते हुए प्रेमचंद उपाध्याय ने कहा कि आज जो रामलीला उत्तर भारत के जन-जीवन का अनिवार्य अंग बर चुकी है, उसके सद्भाव की कहानी अस्पष्ट है। प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में नाटकों का विषय रही है, परन्तु रामलीला और राम-नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियों में अन्तर है। एक तो रामलीला धार्मिक नाट्यरूप है, उसका उद्देश्य रामभक्ति का प्रचारऔर प्रसार है। अन्य प्रशिक्षक के रूप में बोलते हुए खैमचंद यदुवंशी (मथुरा) का मानना रहा कि चौदहवीं शताब्दी तक संस्कृत नाटकों का रूप परिवर्तित होने लगा था। नाटकों में गद्य का प्रयोग कम-से-कम होने लगा था और उनकी संरचना अधिक से अधिक चम्पूकाव्य के रूप में रह गयी थी। लगता है कि उस समय तक संस्कृत नाटकों को भी संगीत और नृत्य के साथ प्रस्तुत करने की दृकष्टि से लिखा जाने लगा था। उस समय की नाट्ययाभिनय की पद्धति का एक विवरण हमें दामोदर गुप्त रचित कुट्टनीमत काव्यम् में मिलता है। शिविर में 24 कलाकारों ने भाग लिया। उनको वेशभूषा, संवाद आदि के संबंध में जानकारी दी गई। उपरोक्त विवेचन का मतलब यह बताया गया कि वह अपनी सांस्कृतिक विरासत की तह में पहूँचें। आभार संस्था के निदेशक आर.पी.अग्रवाल ने व्यक्त किया।

दैनिक नवज्योति, जयपुर

दिनांक 20 फरवरी, 2016

पृष्ठ संख्या 10 कॉलम संख्या 1-2

पांच दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन

मित्र मण्डली तरूण समाज समिति एवं भारत सरकार संस्कृति मंत्रालय, संगीत नाटक अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में संचालित ''भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण'' के अंतर्गत रामलीला प्रतिलेखन एवं प्रशिक्षण के तहत 5 दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन शुक्रवार को तिलक नगर में सम्पन्न हुआ। प्रशिक्षण समापन को सम्बोधित करते हुए प्रेमचंद उपाध्याय ने कहा कि आज जो रामलीला उत्तर भारत के जन-जीवन का अनिवार्य अंग बन चुकी है, उसके सद्भाव की कहानी अस्पष्ट है। प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं, में नाटकों का विषय रही है, परन्तु रामलीला और राम-नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियों में अन्तर है। एक तो रामलीला धार्मिक नाट्यरूप है, उसका उद्देश्य रामभक्ति का प्रचारऔर प्रसार है।

राजस्थान पत्रिका, जयपुर / अल्वर

दिनांक 20 फरवरी, 2016 अलवर

पृष्ठ संख्या 11 कॉलम संख्या 6-8

रामलीला का उद्देश्य राम भक्ति का प्रचार

प्रशिक्षण शिविर का समापन

भरतपुर @ पत्रिका. मित्र मण्डली तरूण समाज समिति एवं भारत सरकार संस्कृति मंत्रालय, संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में संचालित 'भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण' के अंतर्गत रामलीला प्रतिलेखन एवं प्रशिक्षण शिविर का समापन तिलक नगर में हुआ। समापन सत्र को सम्बोधित करते अलीगढ़ के प्रेमचंद उपाध्याय ने कहा कि प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में नाटकों का विषय रही है, लेकिन रामलीला और राम-नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियों में अन्तर है। रामलीला धार्मिक नाट्यरूप है, उसका उद्देश्य रामभक्ति का प्रचार और प्रसार है। मथुरा के खैमचंद यदुवंशी ने कहा कि चौदहवीं शताब्दी तक संस्कृत नाटकों का रूप परिवर्तित होने लगा था। नाटकों में गद्य का प्रयोग कम-से-कम होने लगा था और उनकी संरचना अधिक से अधिक चम्पूकाव्य के रूप में रह गई थी। शिविर में 24 कलाकारों को वेशभूषा, संवाद आदि की जानकारी दी गई। संस्था निदेशक राजेन्द्र प्रसाद अग्रवाल न आभार जताया।

03

अमर उजाला, आगरा

दिनांक 20 फरवरी, 2016

पृष्ठ संख्या 8 कॉलम संख्या 3-5

रामलीला का संरक्षण आवश्यक

अमर उजाला ब्यूरो

भरतपुर में पांच दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का आयोजन

भरतपुर । मित्र मंडली द्वारा आयोजित रामलीला प्रतिलेखन एवं प्रशिक्षण के पांच दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन शुक्रवार को हो गया।

मित्र मंडली और संगीत नाटक अकाडमी, नई दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में संचालित 'भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परंपराओं का संरक्षण' के अंतर्गत रामलीला प्रतिलेखन एवं प्रशिक्षण का आयोजन किया गया था।

समापन समारोह में बोलते अलीगढ के विद्वान प्रेमचंद्र उपाध्याय ने कहा कि आज जो रामलीला उत्तर भारत के जन-जीवन का अनिवार्य अंग बन चुकी है उसके संवर्धन की कहानी अस्पष्ट है। प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में नाटकों का विषय रही है, परंतु रामलीला और राम-नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियों में अंतर है।

उन्होंने कहा कि एक तो रामलीला धार्मिक नाट्यरूप है, उसका उद्देश्य रामभक्ति का प्रचार और प्रसार है। दूसरे, रामलीला के प्रस्तुतिकरण की शैली नाटक की भांति मात्र संवेदना पर आधारित नहीं है, वरन् महाकाव्य-आधारित है, उसमें रामचरितमानस का निश्चित आधार रहता है।

प्रशिक्षक मथुरा के खेमचंद यदुवंशी का मानना रहा कि चौदहवीं शताब्दी तक संस्कृत नाटकों का रूप परिवर्तित होने लगा था। प्रशिक्षण शिविर में 24 कलाकारों ने भाग लिया। उनको वेशभूषा, संवाद आदि के संबंध में जानकारी दी गई। उपरोक्त विवेचन का मतलब यह बताया गया कि वह अपनी सांस्कृतिक विरासत की तह में पहुंचें। आभार संस्था के निदेशक आरपी अग्रवाल ने व्यक्त किया।

दैनिक सांध्य ज्योति दर्पण, जयपुर /भरतपुर

दिनांक 20 फरवरी, 2016

पृष्ठ संख्या 1 कॉलम संख्या 2-4

पांच दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन

जाएगा।

भरतपुर 20 फरवरी। मित्र मण्डली तरूण समाज समिति एवं भारत सरकार संस्कृति मंत्रालय, संगीत नाटक अकादमी के संयुक्त तत्वावधान में संचालित ''भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण'' के अंतर्गत रामलीला प्रतिलेखन एवं प्रशिक्षण के तहत 5 दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन शुक्रवार को तिलक नगर में सम्पन्न हुआ।

प्रशिक्षण समापन को सम्बोधित करते हुए प्रेमचंद उपाध्याय ने कहा कि आज जो रामलीला उत्तर भारत के जन-जीवन का अनिवार्य अंग बर चुकी है, उसके सद्भाव की कहानी अस्पष्ट है। प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में नाटकों का विषय रही है, परन्तु रामलीला और राम-नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियों में अन्तर है। एक तो रामलीला धार्मिक नाट्यरूप है, उसका उद्देश्य रामभक्ति का प्रचारऔर प्रसार है। अन्य प्रशिक्षक के रूप में बोलते हुए खैमचंद यदुवंशी (मथुरा) का मानना रहा कि चौदहवीं शताब्दी तक संस्कृत नाटकों का रूप परिवर्तित होने लगा था। नाटकों में गद्य का प्रयोग कम-से-कम होने लगा था और उनकी संरचना अधिक से अधिक चम्पूकाव्य के रूप में रह गयी थी। लगता है कि उस समय तक संस्कृत नाटकों को भी संगीत और नृत्य के साथ प्रस्तुत करने की दृकष्टि से लिखा जाने लगा था। उस समय की नाट्ययाभिनय की पद्धति का एक विवरण हमें दामोदर गुप्त रचित कुट्टनीमत काव्यम् में मिलता है। शिविर में 24 कलाकारों ने भाग लिया। उनको वेशभूषा, संवाद आदि के संबंध में जानकारी दी गई। उपरोक्त विवेचन का मतलब यह बताया गया कि वह अपनी सांस्कृतिक विरासत की तह में पहूँचें। आभार संस्था के निदेशक आर.पी.अग्रवाल नें व्यक्त किया।

(64)

दैनिक भास्कर, जयपुर/भरतपुर

दिनांक 20 फरवरी, 2016

पृष्ठ संख्या 17 कॉलम संख्या 3-5

रामलीला प्रतिलेखन विषय पर पांच दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन

मित्र मंडली तरुण समाज समिति व संस्कृति मंत्रालय ने कराया आयोजन

भास्कर संवाददाता | भरतपुर

संस्था मित्र मंडली तरुण समाज समिति एवं भारत सरकार संस्कृति मंत्रालय, संगीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में संचालित भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परंपराओं का संरक्षण के तहत रामलीला प्रतिलेखन एवं प्रशिक्षण के तहत 5 दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन तिलक नगर में हुआ।

इस अवसर पर प्रेमचंद उपाध्याय अलीगढ़ ने कहा कि आज जो रामलीला उत्तर भारत के जन-जीवन का अनिवार्य अंग बन चुकी है, उसके सद्भाव की कहानी अस्पष्ट है। प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में नाटकों का विषय रही है, परन्तु रामलीला और राम-नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियों में अंतर है। एक तो रामलीला धार्मिक नाट्य रूप है, उसका उद्देश्य रामभक्ति का प्रचार और प्रसार है। उन्होंने कहा कि विचारों के आदान प्रदान से नयापन आता है। आज के समय में विचारों की अभिव्यक्ति का होना बहुत आवश्यकता हो चुका है।

दूसरे, रामलीला के प्रस्तुतिकरण की शैली नाटक की भांति मात्र संवादों पर आधारित नहीं है, वरन महाकाव्य-आधारित है, उसमें रामचरितमानस का निश्चित आधार रहता है। खेमचंद यदुवंशी मथुरा ने कहा कि नाटकों में गद्य का प्रयोग कम-से-कम होने लगा था और उनकी संरचना अधिक से अधिक चम्पूकाव्य के रूप में रह गई थी। लगता है कि उस समय तक संस्कृत नाटकों को भी संगीत और नृत्य के साथ प्रस्तुत करने की दृष्टि से लिखा जाने लगा था।

प्रशिक्षण शिविर में 24 कलाकारों ने भाग लिया। उनको वेशभूषा, संवाद आदि के संबंध में जानकारी दी गई। आभार संस्था निदेशक आरपी अग्रवाल ने जताया।

05

तस्वीरे भारत, आगरा / भरतपुर
दिनांक 20 फरवरी, 2016
पृष्ठ संख्या 8 कॉलम संख्या 5-8

रामलीला अमूर्त सांस्कृतिक विरासत, संरक्षण आवश्यक

भरतपुर। मित्र मण्डली तरूण समाज समिति भरतपुर एवं भारत सरकार संस्कृति मंत्रालय, संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में संचालित "भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत और विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का संरक्षण" के अंतर्गत रामलीला प्रतिलेखन एवं प्रशिक्षण के तहत ५ दिवसीय प्रशिक्षण शिविर का समापन आज यहां तिलक नगर में सम्पन्न हुआ।

प्रशिक्षण समापन को सम्बोधित करते हुए प्रेमचंद उपाध्याय (अलीगढ़) ने कहा कि आज जो रामलीला उत्तर भारत के जन–जीवन का अनिवार्य अंग बर चुकी है, उसके सदभव की कहानी अस्पष्ट है। प्राचीन काल से रामकथा संस्कृत और आगे चलकर विभिन्न भारतीय भाषाओं में नाटकों का विषय रही है, परन्तु रामलीला और राम–नाटक में उद्देश्य और संरचना दोनों ही दृष्टियों में अन्तर है।

एक तो रामलीला धार्मिक नाट्यरूप है, उसका उद्देश्य राममक्ति का प्रचारऔर प्रसार है। दूसरे, रामलीला के प्रस्तुतिकरण की शैली नाटक की भांति मात्र संवादाओं पर आधारित नहीं है, वरन् महाकाव्य–आधारित है, उसमें रामचरितमानस का निश्चित आधार रहता है।

अन्य प्रशिक्षक के रूप में बोलते हुए खैमचंद यदुवंशी (मथुरा) का मानना रहा कि चौदहवीं शताब्दी तक संस्कृत नाटकों का रूप परिवर्तित होने लगा था। नाटकों में गद्य का प्रयोग कम–से–कम होने लगा था और उनकी संरचना अधिक से अधिक चम्पूकाव्य के रूप में रह गयी थी।

लगता है कि उस समय तक संस्कृत नाटकों को भी संगीत और नृत्य के साथ प्रस्तुत करने की दृकष्टि से लिखा जाने लगा था। उस समय की नाट्ययाभिनय की पद्धति का एक विवरण हमें दामोदर गुप्त रचित कुट्टनीमत काव्यम् में मिलता है। रत्नावली नाटिका के प्रस्तुतीकरण में प्रारम्भ से अन्त तक संगीत और नृत्य की प्रधानता ज्ञात होती है। इसमें मदनोत्सव के वर्णन में चर्चरी का भी उल्लेख किया गया है। नाटक की समाप्ति पर जो बातें कही गयी हैं उनसे भी नाट्य–प्रदर्शन में संगीत की प्रधानता स्पष्ट होती है "गंभीर मधुर शब्दों तथा अनेक भंगिमाओं वाले लम्बे गीत की अग्रष्ट लय के साथ संगत द्वारा वाटक ने अपना कमाल दिखाया है गायकों ने नियमित आरोह, अवरोह, द्रुत, मध्य और विलम्बित ताल, लय तथा सुन्दर, समताल और रस से युक्त सुन्दर ढंग से गाया।"

प्रशिक्षण शिविर में २४ कलाकारों ने भाग लिया। उनको वेशभूषा, संवाद आदि के संबंध में जानकारी दी गई। उपरोक्त विवेचन का मतलब यह बताया गया कि वह अपनी सांस्कृतिक विरासत की तह में पहूँचें। आभार संस्था के निदेशक आर.पी.अग्रवाल ने व्यक्त किया।